21

अक्षसूक्त

ऋग्वेद में एक प्रसिद्ध देव की स्तुति विधान करने के लिये अभीष्ट सिद्धि के लिये वह देव की प्रार्थना करते है। इसी प्रकार मनुष्यों के सामाजिक दुर्व्यवहार के निराकरण के लिये सूक्तो का सङ्कलन किया गया है। जब समाज में भोगविलास की शक्ति बढ़ जाती है, तब द्युत कार्य भी बढ़ता है। वैदिक काल से ही जुआ खेल बहुत प्रचलित सामाजिक कुत्सित खेल है। ऋग्वेद के दसवें मण्डल में चौतींसवे सूक्त में इस विषय को आधार करके लिखा गया। यह ही अक्षसूक्त इस नाम से विख्यात है। इस सूक्त के ऐलूषकवष ऋषि, त्रिष्टुप् छन्द, सातवें मन्त्र का जगती छन्द, और देवता अक्ष ऋषि है। इस सूक्त में मुख्य रूप से कहा गया है कि जुआ खेल कभी नही खेलना चाहिये, उसके स्थान पर कृषि इत्यादि कार्य करना चाहिए। जैसे मन्त्र में ही कहा गया है की – अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमित्कृषस्व इत्यादि। इस प्रकार से सूक्त की महिमा प्रकट की गई है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढने के बाद आप सक्षम होंगे :

- अक्षसूक्त के संहिता पाठ, पदपाठ का अन्वय और व्याख्या कर पाने में;
- द्युत कार्य के बुरे फल को जान पाने में;
- द्युत कर्म से होने वाले दुष्परिणामों को समझ पाने में;
- वैदिक शब्दों को जान पाने में;
- वैदिक लौकिक शब्दों के मध्य में भेद को जान पाने में;
- द्युत कर्म के स्थान पर क्या-क्या करना चाहिए, इसे समझ पाने में।

21.1 मूलपाठ

प्रावेपा मा बृहतो मादयन्ति प्रवातेजा इरिणे ववृतानाः।
सोमस्येव मौजवतस्य भक्षो विभीदको जागृविर्मह्यमच्छान्॥१॥

न मा मिमेथ न जिहीळ एषा शिवा सखिभ्य उत मह्यमासीत्।
अक्षस्याहमेकपरस्य हेतो-रनुव्रतामप जायामरोधम्॥२॥

द्वेष्टि श्वश्रूरप जाया रुणद्धि न नाथितो विन्दते मर्डितारम्।
अश्वस्येव जरतो वस्न्यस्य नाहं विन्दामि कितवस्य भोगम्॥३॥

अन्ये जायां परि मृशन्त्यस्य यस्यागृधद्वेदने वाज्यक्षः।
पिता माता भ्रातर एनमाहु-र्न जानीमो नयता बद्धमेतम्॥४॥

यदादीध्ये न दविषाण्येभिः परायद्भ्योऽवं हीये सखिभ्यः।
न्युप्ताश्च बभ्रवो वाचमक्रत एमीदेषां निष्कृतं जारिणीव॥५॥

सभामेति कितवः पृच्छमानो जेष्यामीति तन्वा शूशुजानः।
अक्षासो अस्य वि तिरन्ति कामं प्रतिदीव्ने दधत आ कृतानि॥६॥

अक्षास इदङ्कुशिनो नितोदिनो निकृत्वानस्तपनास्तापयिष्णवः।
कुमारदेष्णा जयतः पुनर्हणोमध्वा सम्पृक्ताः कितवस्य बर्हणा॥७॥

त्रिपञ्चाशः क्रीळति व्रात एषां देव इव सविता सत्यधर्मा।
उग्रस्य चिन्मन्यवे ना नमन्ते राजा चिदेभ्यो नम इत्कृणोति॥८॥

नीचा वर्तन्त उपरि स्फुरन्त्यहस्तासो हस्तवन्तं सहन्ते।
दिव्या अङ्गारा इरिणे न्युप्ताःशीताः सन्तो हृदयं निर्दहन्ति॥९॥

जाया तप्यते कितवस्य हीनामाता पुत्रस्य चरतः क्व स्वित्।
ऋणावा बिभ्यद्धनमिच्छमानो-ऽन्येषामस्तमुप नक्तमेति॥१०॥

स्त्रियं दृष्ट्वाय कितवं ततापान्येषां जायां सुकृतं च योनिम्।
पूर्वाह्णे अश्वान्युयुजे हि बभ्रून्सो अग्नेरन्ते वृषलः पपाद॥११॥

यो वः सेनानीर्महतो गणस्यराजा व्रातस्य प्रथमो बभूव।
तस्मै कृणोमि न धना रुणध्मिदशाहं प्राचीस्तदृतं वदामि॥१२॥

अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमित्कृषस्व वित्ते रमस्व बहु मन्यमानः।
तत्र गावः कितव तत्र जायातन्मे वि चष्टे सवितायमर्यः॥१३॥

मित्रं कृणुध्वं खलु मृळता नो मा नो घोरेण चरताभि धृष्णु।
नि वो नु मन्युर्विशतामरातिरन्यो बभ्रूणां प्रसितौ न्वस्तु॥१४॥

टिप्पणियाँ

21.1.1 मूलपाठ की व्याख्या (श्लोक 1-5)

प्रावेपा मा बृहतो मादयन्ति प्रवातेजा इरिणे ववृतानाः।
सोमस्येव मौजवतस्य भक्षो विभीदको जागृविर्मह्यमच्छान्॥१॥

पदपाठ - प्रावेपाः। मा। बृहतः। मादयन्ति। प्रवातेऽजाः। इरिणे। ववृतानाः॥ सोमस्यऽइव। मौजऽवतस्य। भक्षः। विऽभीदकः। जागृविः। मह्यम्। अच्छान्॥१॥

अन्वय - प्रवातेजाः बृहतः इरिणे वर्वृतानां प्रावेपाः मा मादयन्ति। मौजवतस्य सोमस्य भक्ष इव जागृविः विभीदकः मह्यम् अच्छन्।

व्याख्या - बडे बड़े पासे जिस समय नक्शे (पासा खेलने के स्थान) के ऊपर इधर-उधर चलते है, उस समय उन्हें देखकर मुझे बड़ा आनंद मिलता है। मुजवान पर्वत पर सोम उत्पन्न उत्तम सोमलता का रस पीकर जैसी प्रसन्नता होती है, वैसे ही प्रसन्नता बहेरे वृक्ष के काठ से बने अक्ष मेरे लिए हो जयपराजय आनंद दु:ख को उत्पन्न करने वाले जुआरी मुझे आनंद प्रदान करते है। वहाँ दृष्टान्त है। जैसे सोम के लिए मौजवत पर्वत है। मूजवत पर्वत पर उत्पन्न होने वाली मौजवत कहलाती है। वहाँ पर उसका ही सोम उत्तम माना जाता है। खाने पीने वाले यजमान और देवो को आनन्द प्रदान करती है यह उसका अर्थ है। और यास्क ने कहा - 'प्रवेपिणो मा महतो विभीतकस्य फलानि मादयन्ति। प्रवातेजाः प्रवणेजा इरिणे वर्तमाना इरिणं निर्ऋणमृणातेरपार्ण भवत्यपरता अस्मादोषधय इति वा। सोमस्येव मौजवतस्य भक्षो मौजवतो मूजवति जातो मूजवान् पर्वतो मुञ्चवान् मुञ्जो विमुच्यत इषीकामिषीकैषतेर्गतिकर्मण इयमपीतरेषीकैतस्मादेव विभीतको बिभेदनाज्जागृवि र्जागरणन्मह्यमवच्छदत्' (निरु० ९.८) इति।

सरलार्थ - प्रवण देश में उत्पन्न बड़े बड़े पासे जुआ खेलने के तख्ते पर इधर-उधर बिखरते हुए मुझे आनन्दित करते है, जीत हार में हर्ष शोक जगाने वाला पासा मुझे उसी प्रकार सुख देता है जिस प्रकार मुंज पर्वत पर उत्पन्न सोमलता का रस पीकर सुख मिलता है।

व्याकरण

- **ववृतानाः** - वृद्-धातु से लङ, उस लङ के लुक होने पर शानच प्रथमाबहुवचन में।
- **मादयन्ति** - मद्-धातु से णिच लट् प्रथमपुरुषबहुवचन में।
- **अच्छन्** - छन्द्-धातु से लुङ प्रथमपुरुष एकवचन में।

न मा मिमेथ न जिहीळ एषा शिवा सखिभ्य उत मह्यमासीत्।
अक्षस्याहमेकपरस्य हेतो-रनुव्रतामप जायामरोधम्॥२॥

पदपाठ - न। मा। मिमेथ। न। जिहीळे। एषा। शिवा। सखिऽभ्यः। उत। मह्यम्। आसीत्॥ अक्षस्य। अहम्। एकऽपरस्य। हेतोः। अनुऽव्रताम्। अप। जायाम्। अरोधम्॥२॥

अन्वय – एषा मा न मिमेथ, न जिहीळे, सखिभ्य उत मह्यम् शिवा आसीत्, अहम् एकपरस्य अक्षस्य हेतोः अनुव्रताम् जायाम् अप अरोधम्।

व्याख्या– मेरी यह रूपवती पत्नी कभी मुझसे उदासीन नही हुई, और न कभी मुझसे लज्जित हुई। वह पत्नी मेरे परिवार की विशेष रूप से सेवा करती थी। और भी वह मेरी भी सेवा करती थी। इस प्रकार की देवी को केवल पास के कारण मैने उस परम अनुरागिणी भार्या को छोड़ दिया।

सरलार्थ – इस मन्त्र में पत्नी न मुझसे कभी अप्रसन्न हुई और न इसने कभी मुझसे लज्जा की, यह मेरे मित्रो और मेरे प्रति सुखकारी थी, इस प्रकार सर्वथा अनुकूल पत्नी को भी मैने एकमात्र पासों के कारण त्याग दिया।

व्याकरण

- ममेथ – मिथ्–धातु से लिट् प्रथमपुरुष एकवचन में।
- जिहीळे – हीड्–धातु से लिट् प्रथमपुरुष एकवचन में।
- अरोधम् – रुध्–धातु से लुङ उत्तमपुरुष एकवचन में (वैदिक)।

द्वेष्टि श्वश्रूरप जाया रुणद्धि न नाथितो विन्दते मर्डितारम्।
अश्वस्येव जरतो वस्न्यस्य नाहं विन्दामि कितवस्य भोगम्॥३॥

पदपाठ – द्वेष्टि। श्वश्रूः। अप। जाया। रुणद्धि। न। नाथितः। विन्दते। मर्डितारम् अश्वस्यऽइव। जरतः। वस्न्यस्य। न। अहम्। विन्दामि। कितवस्य। भोगम्॥३॥

अन्वय – श्वश्रूः द्वेष्टि, जाया अप रुणद्धि, नाथितः मर्डितारं न विन्दते। अहं वस्न्यस्य जरतः अश्वस्य इव कितवस्य भोगं न विन्दामि।

व्याख्या – जो जुआरी जुआ खेलते है उसकी सास उसकी निंदा करती है। और उसकी पत्नी उसको त्याग देती है। और जुआरी किसी से कुछ मागता है तो उसे कोई कुछ नही देते है। उसे उसी प्रकार छोड़ दिया जाता है, जैसे वृद्ध घोड़े को कोई नही खरीदते है, ठीक उसी प्रकार उसको भी कोई कुछ नही देते है।

सरलार्थ – सास जुआ खेलने वाले की निन्दा करती है, एवं पत्नी उसे छोड़ देती है, यदि वह धन मागे तो उसे कोई धन नही देता है। जिस प्रकार बूढ़े घोड़े का कुछ भी मूल्य नही लगता उसी प्रकार मुझ जुआरी का कही आदर नही होता है।

व्याकरण

- **द्वेष्टि** – द्विष्–धातु से लट् प्रथमपुरुष एकवचन में।
- **रुणद्धि** – रुध्–धातु से लट् प्रथमपुरुष एकवचन में।
- **नाथितः** – नाथ–धातु से क्तप्रत्यय करने प्रथमा एकवचन में।

- **मर्डितारम्** – मृड्-धातु से तृच्प्रत्यय करने पर द्वितीया एकवचन में।
- **विन्दति** – विद्-धातु से लट् प्रथमपुरुष एकवचन में (वैदिक)
- **जरतः** – जृ-धातु सेशतृप्रत्यय करने पर षष्ठी एकवचन में।
- **विन्दामि** – विद्-धातु से लट् उत्तमपुरुष एकवचन में।

अन्ये जायां परिं मृशन्त्यस्य यस्यागृधद्वेदने वाज्य१क्षः।
पिता माता भ्रातर एनमाहु-र्न जानीमो नयता बद्धमेतम्॥४॥

पदपाठ – **अन्ये। जायाम्। परिं। मृशन्ति। अस्य। यस्यं। अगृधत्। वेदने। वाजी। अक्षः॥ पिता। माता। भ्रातरः। एनम्। आहुः। न। जानीमः। नयत। बद्धम्। एतम्॥४॥**

अन्वय – यस्य वेदेन अक्षः अगृधत्, अस्य जायाम् अन्ये परिमृशन्ति, पिता माता भ्रातरम् एनम् आहुः न जानीमः बद्धम् एनं नयत।

व्याख्या – पासे का आकर्षण बड़ा कठिन है, यदि किसी का धन के प्रति अक्ष की लोभ दृष्टि हो जाए, तो पास वाले की पत्नी व्यभिचारिणी हो जाती है, उस पर चालक जुआरियो की दृष्टि पड़ी रहती है, अन्ये जुआरी उसके वस्त्रकेश आदि के आकर्षण से उसका स्पर्श करते है। और उसके माता-पिता और सहोदर भाई कहते है की हम इस जुआरी को नही जानते है। इस जुआरी को तुम रस्सी से बाँध करके ले जाओ और तुम्हे जैसा उचित लगे वैसा ही करो।

सरलार्थ – शक्तिशाली पासे जिस जुआरी के धन को लालच की दृष्टि से देखते है, उसकी व्याभिचारिणी पत्नी का दुसरे लोग स्पर्श करते है। जुआरी के माता, पिता एवं भाई कर्ज मागने वालों से कहते है – हम इसे नही जानते हैं, आप इसे बांधकर ले जाओ।

व्याकरण

- **अगृधत्** – गृध्-धातु से लङ प्रथमपुरुष एकवचन में (वैदिक)।
- **मृशन्ति** – मृश्-धातु से लट् प्रथमपुरुषबहुवचन में।
- **आहुः** – ब्रू-धातु से लिट् प्रथमपुरुषबहुवचन में।
- **जानीमः** – ज्ञा-धातु से लट् उत्तमपुरुषबहुवचन में।
- **नयत** – नी-धातु से लोट मध्यमपुरुषबहुवचन में (छान्दसदीर्घ)।
- **वाज्य अक्ष** – वाजी+अक्ष, क्षैप्रसन्धि।

यदादीध्ये न दविषाण्येभिः परायद्भ्योऽव हीये सखिभ्यः।
न्युप्ताश्च बभ्रवो वाचमक्रत एमीदेषां निष्कृतं जारिणीव॥५॥

पदपाठ – **यत्। आऽदीध्ये। न। दविषाणि। एभिः। परायत्ऽभ्यः। अव। हीये। सखिऽभ्यः॥ नऽउप्ताः। च। बभ्रवः। वाचम्। अक्रत। एमि। इत्। एषाम्। निःऽकृतम्। जघरिणीऽइव॥५॥**

अन्वय – यत् आदीध्ये एभिः न दविषाणि परायद्भ्यः सखिभ्यः अव हीये, बभ्रवः न्युप्ताः वाचम् अक्रमत, एषां निष्कृतं जारिणी इव एमि इत्।

व्याख्या – जिस समय मैं इच्छा करता हूँ की अब मैं इस समय से जुआ नही खेलूँगा उस समय साथी जुआरियो से हट जाता हूँ। अथवा उनके पास नही बैठता हूँ। उनसे द्वेष नही करके उनसे स्वयं ही दूर चला जाता हूँ। मैं इन प्रथम अक्षो को छोड़ता हूँ। किन्तु पीले रंग के पासों को देखकर ठहरा नही जाता है। उस समय सङ्कल्प का परित्याग करके जैसे भ्रष्टा नारी उप पति के पास जाती है वैसे ही मैं भी जुआरियो के घर पर जाता हूँ।

सरलार्थ – जब मैं निश्चय कर लेता हूँ की जुआ नही खेलूंगा, तब मैं आए हुए जुआरी मित्रो का त्याग देता हूँ, किन्तु जब जुआ खेलने के तख्ते पर फेंके हुए पीले रंग के पासों को शब्द करते हुए देखता हूँ, तो मैं उस स्थान की तरफ चला जाता हूँ जैसे व्याभिचारिणी स्त्री संकेत स्थान पर पहुँच जाती है।

व्याकरण

- **आदीध्ये** – आपूर्वक आत्मनेपद धी-धातु से लट् उत्तमपुरुष एकवचन में।
- **दविषाणि** – दिव्-धातु से लेट उत्तमपुरुष एकवचन में।
- **हीये** – हा-धातु से कर्म लट् उत्तमपुरुष एकवचन में।
- **न्युप्ताः** – निपूर्वकात्वप्-धातु से क्तप्रत्यय करने पर प्रथमाबहुवचन में।
- **अक्रत** – कृ-धातु से लुङ आत्मनेपदप्रथमपुरुषबहुवचन में (वैदिक)।
- **एमि** – इ-धातु से लट् उत्तमपुरुष एकवचन में।

पाठगत प्रश्न 21.1

1. अक्षसूक्त के ऋषि कौन, छन्द क्या, और देवता कौन है?
2. इरिणे इसका क्या अर्थ है?
3. प्रावेपाः इसका क्या अर्थ है?
4. अच्छन् यह रूप कैसे सिद्ध हुआ?
5. जिहीळे यहाँ पर क्या धातु है?
6. मर्डिता इसका क्या अर्थ है?
7. कितव की पत्नी के प्रति अन्यजुआरी क्या करते है?

8. न्युप्ता: इसका क्या अर्थ है?

9. आदीध्ये यह रूप कैसे सिद्ध हुआ?

10. वेदने इसका क्या अर्थ है?

21.1.2 मूलपाठो की व्याख्या (श्लोक 6-10)

सभामेति कितवः पृच्छमानो जेष्यामीति तन्वा३ शूशुजानः।
अक्षासो अस्य वि तिरन्ति कामं प्रतिदीव्ने दधत आ कृतानि॥६॥

पदपाठ - **सभाम्। एति। कितवः। पृच्छमानः। जेष्यामि। इति। तन्वा। शूशुजानः॥ अक्षासः। अस्य। वि। तिरन्ति। कामम्। प्रतिऽदीव्ने। दधतः। आ। कृतानि॥६॥**

अन्वयः - तन्वा शूशुजानः कितवः जेष्यामि इति पृच्छमानः सभाम् एति, अक्षासः प्रतिदीव्ने कृतानि दधतः अस्य कामं वि तिरन्ति।

व्याख्या - जुआरी अपनी छाती को फुलाकर कूदता हुआ जुए के अड्डे पर आता है और कहता है की कौन यहाँ धनिक उसको मैं जीतूँगा, ऐसा पूछता हुआ उस चोपट में कूद जाता है। वहाँ पर कुछ पासे जुआरी के पक्ष में गिरते है तो उसकी मनोकामना को पूर्ण करते है, और कुछ उसके विपक्ष में गिरते है तो उसके विपक्षी के मनोरथो को पूर्ण करते है इस प्रकार जुआ उन दोनों को लोभ के चक्कर में डाले रखता है।

सरलार्थ - जुआरी शरीर से दीप्त होकर एवं यह कहता हुआ जुआघर में जाता है की कौन धन वाला आया है। मैं उसे जीतूँगा कभी-कभी पासे जुआरी की कामना पूरी करते है और उसके विरोधी जुआरी के अनुकूल कर्म धारण करके उसकी इच्छा पूरी करते हैं।

व्याकरण

- **शूशुजानः** - शुज्-धातु से कानच प्रथमा एकवचन में।
- **पृच्छमानः** - प्रच्छ्-धातु से शानच प्रथमा एकवचन में।
- **अक्षासः** - अक्षा का (वैदिक रूप है)।
- **दधतः** - धाधातु से शतृप्रत्यय करने पर प्रथमाबहुवचन में। और षष्ठी एकवचन में।
- **तिरन्ति** - तृ-धातु से लट् प्रथमपुरुषबहुवचन में।

अक्षास इदङ्कुशिनो नितोदिनो निकृत्वानस्तपनास्तापयिष्णवः।
कुमारदेष्णा जयतः पुनर्हणोमध्वा सम्पृक्ताः कितवस्य बर्हणा॥७॥

पदपाठ - **अक्षासः। इत्। अङ्कुशिनः। निऽतोदिनः। निऽकृत्वानः। तपनाः। तापयिष्णवः॥ कुमारऽदेष्णाः। जयतः। पुनःऽहनः। मध्वा। सम्ऽपृक्ताः। कितवस्य। बर्हणा॥७॥**

अन्वय – अक्षासः इत् अङ्कुशिनः नितोदिनः निकृत्वानः तपनाः तापयिष्णवः कुमारदेष्णाः पुनर्हणः कितवस्य बर्हणा मध्वा सम्पृक्ताः।

व्याख्या – किन्तु कभी कभी वह ही पासा बे हाथ हो जाता है, अङ्कुश के समान चुभता है बाण के समान छेदता है, छुरे के समान काटता है, तप्त पदार्थ के समान संताप देता है। जो जुआरी विजय होता है, उसके लिए पासे पुत्रजन्म के समान आनंद दाता होता है। और भी मधुरिमा से युक्त होता है और मानो मीठे वचन से सम्भाषण करता है, किन्तु हारे हुए जुआरी को तो मार ही डालता है।

सरलार्थ – इस मन्त्र में कभी-कभी पासे अंकुश के समान चुभने वाले, हृदय को टुकड़े टुकड़े करने वाले एवं गरम पदार्थ के समान जलाने वाले बन जाते है, पासे जीतने वाले जुआरी के लिए पुत्र जन्म के समान आनंदाता एवं मधु से लिपटे ही लगते है, पर हारने वाले की तो जान निकाल लेते है।

व्याकरण

- **अक्षासः** – अक्षशब्द का प्रथमाबहुवचन में वैदिक रूप है।
- **अङ्कुशिनः** – अङ्कुशशब्द से इनि प्रत्यय करने पर प्रथमाबहुवचन में।
- **निकृत्वानः** – निपूर्वक कृद्-धातु से क्वनिप्प्रत्यय करने पर प्रथमाबहुवचन में।
- **तपनाः** – तप्-धातु से ल्युट प्रथमाबहुवचन में।
- **तापयिष्णवः** – तप्-धातु से णिच इष्णुच्प्रत्यय करने पर प्रथमाबहुवचन में।
- **जयतः** – जिधातु से शतृप्रत्यय करने पर पञ्चमी एकवचन में अथवा षष्ठी एकवचन में।
- **सम्पृक्ताः** – सम्पूर्वक पृच्-धातु से क्तप्रत्यय करने पर प्रथमाबहुवचन में।

त्रिपञ्चाशः क्रीळति व्रात एषां देव इव सविता सत्यधर्मा।
उग्रस्य चिन्मन्यवे ना नमन्ते राजा चिदेभ्यो नम इत्कृणोति॥८॥

पदपाठ – त्रिऽपञ्चाशः। क्रीळति। व्रातः। एषाम्। देवःऽइव। सविता। सत्यऽधर्मा॥ उग्रस्य। चित्। मन्यवे। न। नमन्ते। राजा। चित्। एभ्यः। नमः। इत्। कृणोति॥८॥

अन्वय – सत्यधर्मा सविता देव इव एषाम् त्रिपञ्चाशः व्रातः क्रीळति, उग्रस्य मन्यवे न नमन्ते। राजा चित् एभ्यः नमः कृणोति।

व्याख्या – तिरपन पासे नकश के ऊपर मिलकर विहार करते है, मानो सत्य स्वरूप सूर्यदेव संसार में विचरण करते है। जुआरी प्राय से उस प्रकार के पास से ही खेलते है। वहाँ दृष्टान्त है। सत्यधर्म। सविता सभी जगत के प्ररेक सूर्य देव के समान। जैसे सविता देव जगत में विचरण करता है उसी प्रकार पास उस जुआरियो के संघ में विचरण करता है। किन्तु पासा किसी के वश में नही आता है, उग्रचित क्रूरमन वाले क्रोध मनुष्य के भी वश में ये पास नही होते है। उनके वश में नही होते

है। उनको विजय नही बनाते है। राजा स्वरूप जगत के स्वामी भी इनको नमन करते है जुआ हेलने के समय इनका अपमान नही करते है।

सरलार्थ – सूर्यदेव जिस प्रकार आकाश में विचरण करते है, उसी प्रकार तिरेपन पासे जुआ खेलने के तख्ते पर क्रीडा करते है, ये पासे उग्र एवं क्रोधी के भी वश में नही आते, राजा तक इन पासों के सामने झुकता है। उनकी अवज्ञा नही करते है यह अर्थ है।

व्याकरण

- **क्राळति** – क्रीड्-धातु से लट् प्रथमपुरुष एकवचन में। (दो स्वर के मध्यस्थ होने से डकार के स्थान पर ळकार)
- **नमन्ते** – नम्-धातु से लट् प्रथमपुरुष बहुवचन में वैदिक रूप है।
- **कृणोति** – कृ-धातु से लट् प्रथमपुरुष एकवचन में वैदिक रूप है।

नीचा वर्तन्त उपरिं स्फुरन्त्यहस्तासो हस्तवन्तं सहन्ते।
दिव्या अङ्गारा इरिणे न्युप्ताःशीताः सन्तो हृदयं निर्दहन्ति॥९॥

पदपाठ – नीचा। वर्तन्ते। उपरिं। स्फुरन्ति। अहस्तासः। हस्तऽवन्तम्। सहन्ते॥ दिव्याः। अङ्गाराः। इरिणे। निऽउप्ताः। शीताः। सन्तः। हृदयम्। निः। दहन्ति॥९॥

अन्वय – नीचाः वर्तन्ते उपरि स्फुरन्ति। अहस्तासः हस्तवन्तं सहन्ते। इरिणे न्युप्ताः दिव्याः अङ्गाराः शीताः सन्तः हृदयं निर्दहन्ति।

व्याख्या – पासे कभी नीचे उतरते है तो कभी ऊपर उठते है। इनके हाथ नही है परन्तु जिनके हाथ है वे उनसे पराजय होते है। जुआरी यदि एक बार जीत भी जाता है तो भी उसके मन में भय बना रहता है की अगली बार हार नही जाऊ। जले हुए अङ्गार के समान ये नकश के ऊपर बैठे हुए अग्नि से रहित और इन्धन से रहित होने पर भी शीतस्पर्श वाले सन्त के हृदय में जुए के कारण प्राप्त पराजय से उनके हृदय में पराजय द्वारा उत्पन्न अग्नि जलती है। ये स्पर्श में ठंडे है किन्तु हृदय को जलाता है।

सरलार्थ – पासे कभी नीचे गिरते है और कभी ऊपर उछलते है, ये बिना हाथ के होकर भी हाथवालो को पराजित करते है, ये दिव्य पासे जुआ खेलने के तख्ते पर फेंके जाते समय अंगार बन जाते है ये छूने में ठंडे है, पर हारने वाले के मन को जलाते है।

व्याकरण

- **अहस्तासः** – प्रथमाबहुवचन में, (वैदिक)लोक में तो अहस्ताः, न विद्येते हस्तौ येषां ते अहस्तासः नञ्तत्पुरुष समास।
- **सहन्ते** – आत्मनेपद सह्-धातु से लट् प्रथमपुरुषबहुवचन में।

- **दिव्याः** – दिवि भवाः दिव्याः, दिव्-धातु सेर यत्प्रत्यय करने पर, प्रथमाबहुवचन में।
- **न्युप्ताः** – निपूर्वकवप्-धातु से क्तप्रत्यय करने पर प्रथमाबहुवचन में।
- **निर्दहन्ति** – नि पूर्वक दह्-धातु से लट् प्रथमपुरुषबहुवचन में।

जाया तप्यते कितवस्य हीनामाता पुत्रस्य चरतः क्व स्वित्।
ऋणावा बिभ्यद्धनमिच्छमानो-ऽन्येषामस्तमुप नक्तमेति॥१०॥

पदपाठ – जाया। तप्यते। कितवस्य। हीना। माता। पुत्रस्य। चरतः। क्व। स्वित्॥ ऋणऽवा। बिभ्यत्। धनम्। इच्छमानः। अन्येषाम्। अस्तम्। उप। नक्तम्। एति॥१०॥

अन्वय – कितवस्य हीना जाया तप्यते, क्व स्वित् चरतः पुत्रस्य माता, ऋणावा बिभ्यत् धनम् इच्छमानः नक्तम् अन्येषाम् अस्तम् उप एति।

व्याख्या – जुआरी की स्त्री दीन-हीन वेश में यातना भोगती रहती है, पुत्र कहाँ कहाँ घुमा करता है, ऐसा सोचकर जुआरी की माता व्याकुल रहा करती है, त्यक्ता के रूप में उसकी पत्नी वियोग सन्ताप से सन्तप्त रहती है। माता और इसके सम्बन्धि कष्ट को प्राप्त करते है। पुत्र शोक से सन्तप्त होती है। जो जुआरी को उधार धन देता है, वह इस संदेह में रहता है की मेरा धन फिर मिलेगा अथवा नही मिलेगा। 'अस्तं पस्त्यम्8 इति गृहनाम में पढ़ा हुआ है। और रात में भी वह जुआरी बेचारा दूसरे के घर में रात काटा करता है।

सरलार्थ – अनिश्चित स्थान में घुमने वाले जुआरी की पत्नी उसके बिना दुखी होती है एवं माता परेशान रहती है, दूसरो के कर्ज चढ़ जाने से जुआरी डरता है, वह दूसरो के धन को चुराने की इच्छा करता है रात में घर आता है।

व्याकरण

- **हीना** – हाधातु से क्तप्रत्यय और टाप करने पर प्रथमा एकवचन में।
- **तप्यते** – आत्मनेपद तप्-धातु से लट् प्रथमपुरुष एकवचन में।
- **चरतः** – चर्-धातु से शतृप्रत्यये करने पर षष्ठी एकवचन में।
- **बिभ्यत्** – भीधातु से शतृप्रत्यय करने पर प्रथमा एकवचन में वैदिक रूप है।
- **इच्छमानः** – इष्-धातु से शानच प्रथमा एकवचन में।

पाठगत प्रश्न 21.2

1. जुआरी क्या बोलता हुआ मण्डली में प्रवेश करता है।
2. अक्षासः इसका लौकिक रूप क्या है।

टिप्पणियाँ

3. शूशुजानः यह रूप कैसे सिद्ध हुआ।
4. मध्वा इसका लौकिक रूप क्या है।
5. तापयिष्णवः ये रूप कैसे सिद्ध हुआ।
6. निकृत्वानः यह रूप कैसे सिद्ध हुआ।
7. किसके समान पासों का संघ स्वच्छंद रूप से विचरण करते है।
8. कितने पासे स्वच्छंद रूप से विचरण करते है।
9. कैसे जुआरी की पत्नी सन्तप्त होती है। तुला
10. किस प्रकार का जुआरी ब्राह्मण आदि के घर में प्रवेश करता है।

21.1.3 मूलपाठ की व्याख्या (श्लोक 11-14)

स्त्रियं दृष्ट्वाय कितवं ततापान्येषां जायां सुकृतं च योनिम्।
पूर्वाह्णे अश्वान्युयुजे हि बभ्रून्त्सो अग्नेरन्ते वृषलः पपाद॥११॥

पदपाठ - **स्त्रियम्। दृष्ट्वाय। कितवम्। ततापा। अन्येषाम्। जायाम्। सुऽकृतम्। च। योनिम्॥ पूर्वाह्णे। अश्वान्। युयुजे। हि। बभ्रून्। सः। अग्नेः। अन्ते। वृषलः। पपाद॥११॥**

अन्वय - कितवं स्त्रियम् अन्येषां जायां सुकृतं योनिं दृष्ट्वाय तताप पूर्वाह्णे बभ्रून् युयुजे, वृषलः अग्नेः अन्ते पपाद।

व्याख्या - कितवं कितवः यहाँ पर विभक्ति का व्यत्यय। अपनी स्त्री की दशा को देखकर जुआरी का हृदय फटा करता है, अन्यो की स्त्रियों का सौभाग्य को देखकर के उनकी प्रसन्नता को देखकर उस जुआरी को सन्ताप होता है। जो जुआरी प्रातःकाल में घोड़े की सवारी कर आता है, वाही संध्या के समय दरिद्र के समान जाड़े से बचने के लिए आग से तपाता है, उसके शरीर पर वस्त्र भी नही रहता है।

सरलार्थ - जुआरी दुसरो की सुखी पत्नियों को देखकर और अच्छी प्रकार से बने हुए घरों को देखकर दुखी होता है। जो जुआरी प्रातःकाल घोड़े पर बैठकर जाता है वही शाम को कपड़ो के अभाव में व्याकुल होकर अग्नि के समीप रात्री व्यतीत करता है।

व्याकरण

- **दृष्ट्वाय** - दृश्-धातु से कत्वाय(वैदिक) लोक में तो दृष्ट्वा।
- **तताप** - तप्-धातु से लिट् प्रथमपुरुष एकवचन में।
- **युयुजे** - युज्-धातु से लिट् प्रथमपुरुष एकवचन में।
- **पपाद** - पद्-धातु से लिट् प्रथमपुरुष एकवचन में (लडर्थे लिट्)।

यो वः सेनानीर्महतो गणस्यराजा व्रातस्य प्रथमो बभूव।
तस्मै कृणोमि न धना रुणध्मिदशाहं प्राचीस्तदृतं वदामि॥१२॥

पदपाठ – यः। वः। सेनाऽनीः। महतः। गणस्य। राजा। व्रातस्य। प्रथमः। बभूव॥ तस्मै। कृणोमि। न। धना। रुणध्मि। दश। अहम्। प्राचीः। तत्। ऋतम्। वदामि॥१२॥

अन्वय – वः महतः गणस्य यः सेनानीः बभूव, व्रातस्य प्रथमः राजा, तस्मै अहम् दश प्राचीः कृणोमि, धना न रुणध्मि, तत् ऋतं वदामि।

व्याख्या – हे पासों तुम्हारे दल में जो प्रधान है, सेनापति है अथवा राजा है, उसको मैं अपनी दसों अगुलियाँ जोडकर प्रणाम करता हूँ। गणव्रत में थोडा ही भेद है। राजा ईश्वर प्रथम मुख्य उस पासों को मैं पासों के लिए हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ। इसलिए मैं सच कहता हूँ मुझे दुसरों का धन नही चाहिए, मैं धन को प्राप्त करने के लिए नही खेलता हूँ। ऐसे ही देखना चाहते है। मैं दशसंख्या अङ्गुली को आप के सम्मुख जोड़कर प्रणाम करता हूँ। वह यह मैं ऋत सत्य ही बोलता हूँ। झूठ नही बोलता हूँ।

सरलार्थ – इस मन्त्र में पासों के प्रति कहते है की हे पासों तम्हारे समूह के प्रधान अथवा राजा को मैं उसके लिए नमस्कार करता हूँ। मैं दसों अंगुलियों वाले हाथ को जोड़कर सत्य कहता हूँ की भविष्य में मैं जुए से धन नही कमाऊंगा।

व्याकरण

- **बभूव** – भूधातु से लिट् प्रथमपुरुष एकवचन में।
- **कृणोमि** – कृधातु से लट् उत्तमपुरुष एकवचन में वैदिक रूप है।
- **रुणध्मि** – रुध्-धातु से लट् उत्तमपुरुष एकवचन में।
- **धना** – द्वितीयाबहुवचन में वैदिक रूप है।

अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमित्कृषस्व वित्ते रमस्व बहु मन्यमानः।
तत्र गावः कितव तत्र जायातन्मे वि चष्टे सवितायमर्यः॥१३॥

पदपाठ- अक्षैः। मा। दीव्यः। कृषिम्। इत्। कृषस्व। वित्ते। रमस्व। बहु। मन्यमानः॥ तत्र। गावः। कितव। तत्र। जाया। तत्। मे। वि। चष्टे। सविता। अयम्। अर्यः॥१३॥

अन्वय – कितव! अक्षैः मा दीव्यः कृषिम् इत् कृषस्व। बहु मन्यमानः वित्ते समस्व, तत्र गावः, तत्र जाया तत् मे अयम् अर्यः सविता विचष्टे।

व्याख्या – हे जुआरी कभी जुआ नही खेलना। मेरे वचनों का विश्वास करो जुआ मत खेलो। कृषि- खेती ही करो। खेती से कमाया हुआ जो धन है उससे ही संतुष्ट रहो। वहाँ गाय होती है। वहाँ पत्नी होती है। वह ही धर्म रहस्य को श्रुति स्मृतिकर्त्ता सविता सभी के प्रेरक यह दृष्टिगोचर सूर्य देव ने मुझे विशेष रूप से ऐसा कहा।

सरलार्थ:- सविता जुआरियो के प्रति कहती है की हे जुआरियों पासों से मत खेलो। खेती से बहुत से कृषिकार्य को करो। उससे जितना धन प्राप्त करोगे उससे ही आनन्द का अनुभव करो। उस धन से ही तुम गायो और अपनी स्त्री को प्राप्त करो।

व्याकरण

- दीव्य:-दीव्-धातु से लङ् मध्यमपुरुष एकवचन में।
- कृषस्व-कृष्-धातु से लोट् मध्यमपुरुष एकवचने में (वैदिक)।
- रमस्व-रम्-धातु से लोट् मध्यमपुरुषै एकवचने में।
- चष्टे-चक्ष्-धातु से लट् प्रथमपुरुष एकवचन में।

मित्रं कृणुध्वं खलु मृळता नो मा नो घोरेण चरताभि धृष्णु।
नि वो नु मन्युर्विशतामरातिरन्यो बभ्रूणां प्रसितौ न्वस्तु॥१४॥

पदपाठ - **मित्रम्। कृणुध्वम्। खलु। मृळत। नः। मा। नः। घोरेण। चरत। अभि। धृष्णु॥ नि। वः। नु। मन्युः। विशताम्। अरातिः। अन्यः। बभ्रूणाम्। प्रऽसितौ। नु। अस्तु॥१४॥**

अन्वय - मित्रं कृणुध्वम्, खलु नः मृळत, धृष्णु, घोरेण मा अभिचरत। नु वः मन्युः अरातिः नि विशतां, नु अन्यः बभ्रूणां प्रबन्धने प्रसितौ अस्तु।

व्याख्या - हे पासों हमे बन्धु जानो। हम से मैत्री करो। खलु यह पादपूरण है। हमको प्रसन्नता और सुख दो। हमको धृष्णु धृष्णुना तृतीय अर्थ में प्रथमा। हमारे ऊपर घोरदुर्द्धष प्रभाव का प्रयोग नही करना। और हमारे शत्रु ही तुम्हारे क्रोध के भाजन बने, आप हमारे शत्रु में ही निवास करो। हमारे शत्रु अन्य लोग ही तुम्हारे कोप दृष्टि में फंसे रहे।

सरलार्थः - इस मन्त्र में जुआरी पासों के प्रति कहते है की हे पासों तुम हमारे साथ मित्रता करो। हम पर दया करो। तुम्हारे भयङ्कर प्रभाव से हमारी रक्षा करो। तुम्हारे क्रोध को शत्रुओ पर अब स्थिर करो। अब किसी भी अन्य मनुष्य को अपने पास में मत गिराओ।

व्याकरण

- **कृणुध्वम्** - आत्मनेपद कृधातु से लोट मध्यमपुरुषबहुवचने में।
- **मृळत** - मृड्-धातु से लोट मध्यमपुरुषबहुवचन में।
- **विशताम्** - विश्-धातु से लोट प्रथमपुरुष एकवचन में।
- **प्रसितौ** - प्रपूर्वक सि धातु से क्तिन्प्रत्यय करने पर सप्तमी एकवचन में।
- **अरातिः** - न रातिः अरातिः नञ्तत्पुरुषः, नपूर्वक राधातु से क्तिन्प्रत्यय करने पर प्रथमा एकवचन में।

पाठगत प्रश्न 21.3

1. जुआरी क्या देखकर के दुखी होता है?
2. कृणोमि इसका लौकिक रूप क्या है?
3. धना इसका लौकिक रूप क्या है?
4. दृष्ट्वाय यह रूप क्या सही है?
5. कैसे कृषिमित्कृषष्व ये जुआरी के प्रति कहते है?
6. दीव्यः यह रूप कैसे सिद्ध हुए?
7. मित्रं कृणुध्वं खलु... इत्यादि मन्त्र में खलु इसका क्या अर्थ है?
8. मृळत इसका क्या अर्थ है?
9. धृष्णु यहाँ पर किस अर्थ में प्रथमा है?
10. पपाद यहाँ पर किस अर्थ में लिट् है?

21.2 अक्षसूक्त का सार

ऋग्वेद में अक्षसूक्त से अक्षनामदेव की अभीष्ट सिद्धि के लिए प्रार्थना करते है। सामाजिक कुरीतियों का, मनुष्यों में वर्तमान के दुर्व्यसनों का सम्पूर्ण रूप से नाश के लिए इस सूक्त का आरम्भ किया गया है। समाज में जब भोगविलास की शक्ति का उदय होने पर उसी ही काल में जुए खेल का भी बहुत प्रचार और प्रसार दिखाई देती है। ऋग्वेद के युग में जुआ खेला जाता था, समाज में स्थित भयंकर बीमारी थी। अब अक्षसूक्त में उस विषय की ही आलोचना करते हैं। इस सूक्त के अन्त में कृषि करनी चाहिए, ऐसा मनुष्यों को उपदेश दिया गया है।

ऋग्वेद के दसवें मण्डल का चौतीसवाँ सूक्त अक्षसूक्त है। इस सूक्त के ऋषि ऐलूष कवष मूजवत्पुत्र अथवा अक्ष है। यहाँ सूक्त में प्रथम-सात, नौ और बारहवें मन्त्र का अक्षा देवता है। दूसरे, तीसरे, चौथे, पांचवें, छठे, आठवें, दसवें, ग्यारहवें, और चौदहवें मन्त्र का कितव और अक्ष देवता है। और तेरहवें मन्त्र का कृषि देवता है। केवल सातवें मन्त्र को छोडकर सभी में त्रिष्टुप्छन्द है। सातवे मन्त्र में तो जगतीच्छन्द है। इस अक्षसूक्त में मूलरूप से अक्ष खेलने के बुरे फल को ही कहा गया है। इस सूक्त में एक जुआरी का जीवन कैसे होता है इस विषय में कहा गया है। जुआरी कैसे जीवन बीताते है। उनकी पत्नियो की अवस्था किस प्रकार होती है। किस प्रकार उनका घर का वैभव होता है इत्यादि चौदह मन्त्रो में कहा गया है। मन्त्रो में जो कहा गया है उसको साररूप से कहा गया है।

टिप्पणियाँ

द्यूतक्रीडा का दुष्परिणाम ही लोक में जुए में आसक्त मनुष्य को निन्दा प्राप्त होती है। उसकी पत्नी, श्वश्रू, और अन्य शुभ आकाङ्क्षि उससे द्वेष करते है। उसके प्रति कोई भी दयाभाव नही दिखाता है। बहुमूल्य धन स्थविर घोड़े के समान जुआरी के प्रिय पात्र नही होती है। द्यूतकार पतिव्रता अपनी पत्नी को भी द्यूत क्रीडा में मुद्रा के रूप से स्थापित करता है। और अन्य घर की पत्नी को देखकर द्यूत से उन्मत्त मनुष्य खेद करते हैं। द्यूत क्रीडा का कठिन दुष्परिणाम उसी प्रकार दिखाई देते हैं, जब पराजित की पत्नी को कोई भी आलिङ्गन करता है। जब द्यूतकार उसकी धनराशि को पणरूप से प्रतिज्ञा के लिये भी उसको देने के लिए नही चाहते है, तब राजा के सिपाही रस्सी के द्वारा बान्ध करके राजा के समीप ले जाते हैं। तब उसकी दुर्दशा को देखकर के अपने मनुष्य भी करुणा नही करते हैं, और उसकी रक्षा नही करना चाहते हैं।

इस सूक्त में अक्षक्रीडा का प्रभाव प्रदर्शित किया गया है। अक्षसूक्त में कितवनाम का कोई जुआरी अक्षक्रीडा में मद रहता था। वह बहुत वार पराजित होकर के भी उस आसक्ति से मुक्त नही होता है। आज विजय होऊंगा ऐसा चिन्तन करके द्यूत खेलता यद्यपि जीतता परन्तु, दिन के अन्त में वह सभी और खाली दरिद्र भिक्षुक के समान घर को प्राप्त करके अग्नि के समीपवर्ति स्थान का आश्रय लेता है। 'सः अग्नेरन्ते वृषलः पपाद' (१०-३४-११)। कितव की स्त्री यद्यपि अक्षक्रीडा से पूर्व झगडा नही किया, कितव के मित्रो के लिये अनुकूल ही थी। परन्तु, अक्षक्रीडा के बाद वह परित्यक्ता होती है। जो यहाँ कितव होता है उस की पत्नी अन्य जुआरियों के लिए केश आदि के आकर्षण से स्पृश करते है। इस प्रकार जैसे कितव के प्रतिकूला अवस्था होती है, वैसे ही उसकी पत्नी की भी थी। जहाँ अन्य मनुष्यों की पत्नी सौभाग्य सुख से जीवन बिताती है, वहीं उसकी पत्नी हीन और दीन होकर के अन्तदुख जलती रहती है। और माता मार्ग में झगडती है। वह पाशक्रीडा में पराजित होने पर ऋण लेता है, अन्य घर में आत्मा को छुपाता है। इस प्रकार हृदय विदारक चित्रण इस मन्त्र में चित्रित किया है।

'जाया तप्यते कितवस्य हीना माता पुत्रस्य चरतः क्व स्वित॥
ऋणावा विभ्यद् धनमिच्छमानः अन्येषामस्तमुप नक्तमेति'॥ इति। (१०-३४-१०)

और अन्त में द्यूतकार को बोध हो जाता है। वह सभी जगह पराजय को अनुभव करके अन्त में इस शिक्षा प्राप्त किया की जुआ अकल्याणकारी और धन को हरने वाला है। उसने जान लिया की कृषि कर्म ही प्रकृत और सुखकारी कार्य है। द्यूतप्रभृति खेल मनुष्यो को जीवनस्रोत से हटाते है। उनमे द्यूत आदि में अर्जित धन बहुत परिश्रम से उपार्जित है। कितव ने इस शिक्षा को मनुष्यों में प्रचार किया की - 'अक्षैर्मा दीव्य कृषिमित् कृषस्व वित्ते रमस्व बहु मन्यमानः' इति। स्वयं सविता देव इस सत्य के साक्षिरूप से है। 'तन्मे वि चष्टे सवितायमर्यः' (१०-३४-१३)। और अन्त में कितव अक्षाभिमानी देवता को प्रणाम करते है।

अमर सन्देश

अक्षसूक्त का अधिक से अधिक स्थानों में द्यूतक्रीडा का दुष्परिणाम कहा गया है। वैदिक ऋषि ने अमर सन्देश का मनुष्यों में प्रचार किया की जुए में कभी भी आसक्त मत हो, और अपना

नाश मत करो। और जैसा वेद में कहा गया ऋग्वेद के अक्षसूक्त में 'अक्षैः मा दिव्यः कृषिमित् कृषस्व' इति। (१०-३४-१३) कृषिद्वारा प्राप्त धन में आदरभाव को प्रदर्शित किया गया, उससे ही सुख को प्राप्त होते है। कृषिकार्य में गाय जैसे पालतु पशु रहते है। और उनसे हमारी समृद्धि होती है। अतः हे! अक्ष भगवन् मेरे साथ मित्रता करो। तेरी मोहिनी शक्ति को मुझ पर मत फैलाओ। हमेशा मेरे सहायक हो। इसलिये ही इस सूक्त में अक्षदेव से प्रार्थना की गई- 'प्रावेपा मा बृहतो मादयन्ति' इत्यादि मन्त्रों के द्वारा।

21.3 अक्ष स्वरूप

मानव सामाजिक में दुर्व्यवहार के निराकरण करने के लिए सूक्तो का सङ्कलन किया गया है। अक्षसूक्त भी इसी प्रकार का एक सूक्त है जहाँ अक्षक्रीडा के दुष्परिणाम का वर्णन किया है। अक्षसूक्त में अक्षस्वरूप को वर्णित किया है। अक्ष द्यूतक्रीडा के देवता रूप से विख्यात है। वह देव अक्ष उसी प्रकार श्रद्धा को धारण करते है जैसे शिल्पकार अपने उपकरण को धारण करते है। अथवा जैसे लेखक अपनी लेखनी को धारण करते है, और वाणिज्य अपने तुलादण्ड को धारण करते है। अक्ष किसी भी फल के बीज से निर्माण किया जाता है। ये भूरे रंग के होते है। ये किसी पात्र में रखकर हाथों के द्वारा उनको खेला जाता है। जुआ खेलना ही बुरा कर्म है। मनुसंहिता के राजधर्म प्रसङ्ग में (७.४७) जिन दस काम व्यसनों का उल्लेख प्राप्त होता है वहाँ पर जुआ खेल का भी उल्लेख है। और श्लोक भी है -

'मृगयाक्षः सुरापानं दिवास्वप्नः स्त्रियो मदः।
तौर्य्यत्रिकं वृथाट्या च कामजो दशको गणः'॥ इति।

महाभारत के सभापर्व में भी इस कर्म की अच्छी प्रकार से निन्दा की। 'द्यूते क्षतः कलहो विद्यते, न को वै द्यूतं रोचते बुध्यमानः' यह पङ्क्ति महाभारत के सभापर्व में आती है। परन्तु कुछ अज्ञात आसक्ति वैदिककाल से ही मनुष्यों को इस द्यूतकर्म में लगाती है। इस अक्षसूक्त में उस द्यूत के विषय में तथा उससे मनुष्यों को कैसे छुडाये इस विषय में कहा गया है।

पासे दिव्य अङ्गार के समान महाशक्तिशाली है। यह अक्ष द्यूतक्रीडा को प्रसन्न वैसे ही करता है जैसे सोमरस देवो को आनन्दित करता है। यह अक्ष द्यूत आसक्त मनुष्य को सम्पूर्ण रात्रि को जगाये रखता है। द्यूत में मद मनुष्य चिन्ता आसक्ति में लगा हुआ पूरी रात जगा रहता है। अक्ष के पीछे कोई मोहित करने वाली शक्ति रहती है। द्यूतक्रीडा उसी शक्ति के वश में होकर रहती है। द्यूत आसक्त मनुष्य द्यूतकार्य से विमुख होऊंगा ऐसा सोचता हुआ भी द्यूतस्थल पर अपने संकल्पं को भूल जाता है। द्यूत आसक्त मनुष्य उस खेल में कुशल मनुष्य को देखकर अपनी पराजय को देखकर भी उससे नही डरता है। अक्षक्रीडा का शब्द से आसक्त मनुष्य द्यूतस्थल के प्रति दौड़ता है जैसे कुलटा स्त्री अपने संकेतस्थल के प्रति दौड़ती है।

द्यूतस्थल में फेके हुए पासे मर्मस्थल को प्रसन्न और भयभीत करते है। स्वयं शक्तिशाली से रहित होने पर भी हजारों को पराजित करता है। पासे शीतलस्पर्श से विशिष्ट होने पर भी द्यूतकार के

हृदय को जलाते रहते है। प्रकृति से लकड़ी के होने पर भी द्यूत के समय में वह कभी किसी द्यूतकार को गिरा देता है और कभी किसी को उठाता है। विजय करने वाले को वह आनन्द देने वाला होता है और दु:ख देने वाले को दु:ख देता है।

ऋग्वेद में पासों की संख्या विषय में सूचना देने के लिए त्तिरेपन शब्द प्रयुक्त हुआ। विद्वांन इस शब्द के अनेकों अर्थ किये हैं। जैसे –पन्द्रह, तिरेपन, पच्चीस, एक सौ। प्राचीन काल में संहिताग्रन्थों में और ब्राह्मणग्रन्थो में द्यूतचलन सम्बन्धियों की उक्तीयों की तालिका प्राप्त होती है। द्यूतक्रीडा के लिए भूमि पर एक निम्न स्थान का निर्माण किया जाता है।

पाठ का सार

इस अक्षसूक्त में मूल रूप से अक्षक्रीडा के बुरे फल को ही कहा। इस सूक्त में एक जुआरी का जीवन कैसे होता है इस विषय,में कहा गया है। कैसे जुआरी जीवन को बीताते है। उनकी पत्नियो की अवस्था किस प्रकार होती है। उनके घर का वैभव कैसे होता है। इन विषयो को चौदह मंत्रो के द्वारा कहा गया है। मन्त्रो में जो कहा गया है उस की ही यहाँ पर साररूप से कहते है। जो जुआरी की स्त्री होती है, वह यद्यपि अक्षक्रीडा से पूर्व झगडा नही करती थी, कितव मित्रो के लिए अनुकूल ही था। परन्तु, अक्षक्रीडा के बाद वह ही अनुकूल स्त्री परित्यक्ता होती है। जो कितव होता है, उसकी सास भी उसको छोड़ देती है। पत्नी भी हमेशा दु:खी होती है। और जो कितव होता है, उसकी पत्नी को भी अन्ये जुआरी केश आदि आकर्षण से स्पृश करते है। इसी प्रकार जैसे जुआरी की प्रतिकूल अवस्था होती है वैसे ही उसकी पत्नी की भी होती है। यद्यपि कितव सोचता है की अब नही खेलूंगा, फिर भी पीले पासों को देखकर पतित व्यभिचारिणी स्त्री के समान ही चला जाता है। इसी प्रकार उसकी दुरवस्था होता है। पास के कुछ विशेषण भी है। और वे अङ्कुशिन, नितोदिन, विनाशिन, सन्तापदा, पुत्रतुल्यधनदा। इस प्रकार के पासे होते है। केवल इसी प्रकार ही नही अपितु वे क्रोधि के सामने भी नही झुकते है। वे अङ्गार के समान ही जुआरी के हृदय को जलाते है। राजा भी उनकी अवज्ञा नही करता है। उन जुआरी की स्त्रियों की स्थिति क्या होती है कहते है। जो जुआरी होते है उनकी पत्नियाँ दु:खी होती है। और उन जुआरियो को ऋण देने में भी भी लगता है। जुआरी रात में दूअरो के घर में चोरी के लिए प्रवेश करते है। जुआरी अपनी स्त्री घर वैभव को और अन्य की पत्नियों को और घर वैभव को देखकर दु:खी होता है। इस प्रकार जुआरी का जीवन चलता है। वहाँ अक्षसूक्त के चौदहवे मन्त्र को पास के प्रति जुआरी ने प्रार्थना की है। और तेरहवे मन्त्र में अक्षक्रीडा को छोड़कर खेती करने के लिए कहा गया है। इसी प्रकार सम्पूर्ण अक्षसूक्त में पासों का विवरण, उनका बुरा फल, और जुआरी के परिणाम दिए गए है।

पाठांत प्रश्न

1. अक्षसूक्त का सार लिखिए।
2. पासों से खेलने से जुआरी क्या बनता है? इसकी मन्त्र सहित व्याख्या कीजिए।
3. जुए को छोडकर क्या करना चाहिए। इस विषय पर मन्त्र को लिखकर व्याख्या कीजिए।
4. मित्रं कृणुध्वं खलु ... इत्यादिमन्त्र को पूरा करके व्याख्या कीजिए।
5. नीचा वर्तन्त उपरि ... इत्यादिमन्त्र को पूर्ण करके व्याख्या कीजिए।

पाठगत प्रश्नो के उत्तर

21.1

1. ऐलूषकवष ऋषि, त्रिष्टुप् और ७ वे मन्त्र में जगती छन्द है, अक्ष ऋषि देवता है।
2. विचरण करते है।
3. चलायमान धर्म वाले।
4. छन्द्-धातु से लुङ प्रथमपुरुष एकवचन में।
5. हीड् धातु।
6. सुख को देने वाले।
7. वस्त्रकेश आदि के आकर्षण से स्पर्श करते है।
8. मुर्ख के समान।
9. आपूर्वक आत्मनेपद धीधातु से लट् उत्तमपुरुष एकवचन में।
10. धन।

21.2

1. यहाँ पर कौन धनवान है उसको मैं जीतुगा।
2. अक्षा: लौकिक रूप है।
3. शुज्-धातु से कानच प्रथम एकवचन में।

4. मधुना लौकिक रूप है।
5. तप्-धातु से णिच इष्णुच्प्रत्यय करने पर प्रथमाबहुवचन में।
6. निपूर्वक कृद्-धातु से क्वनिप्प्रत्यय करने पर प्रथमाबहुवचन में।
7. जैसे सूर्य देव संसार में विचरण करता है।
8. तिरेपन।
9. वियोग सन्ताप और पुत्र शोक से।
10. पासों से पराजित ऋणी मनुष्य।

21.3

1. अपने से अन्य पुरुषों की पत्नियों को और उनके घर वैभव को देखकर और अपनी दुर्दशा को देखकर दुखी होता है।
2. करोमि लौकिक रूप है।
3. धनानि लौकिक रूप है।
4. वेद में उचित है।
5. उस कृषि से गाय होती है। वहाँ पत्नी होती है। वह ही धर्मरहस्य है।
6. दीङ्-धातु से लङ् मध्यमपुरुष एकवचन में।
7. पादपूरण अर्थ में।
8. सुख से।
9. तृतीय अर्थ में।
10. लड अर्थ में।

॥ इक्कीसवाँ पाठ समाप्त ॥